'अप्प दीपो भव'

वॉयस ऑफ बुद्धा

Postal Reg. No.-DL(ND)-11/6144/2019-20-21
WPP Licence No.- U(C)-101/2019-2021
R.N.I. No. 68180/98

Date of Publication : 31.01.2019
Date of Posting on concessional rate :
2-3 & 16-17 of each fortnight

मूल्य : पाँच रूपये

प्रकाशक : डॉ. उदित राज, चेयरमैन - जस्टिस पब्लिकेशंस, टी-22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001, फोन : 011-23354841-42

Website : www.aiparisangh.com **E-mail: parisangh1997@gmail.com**

● वर्ष : 22 ● अंक 3 ● पाक्षिक ● द्विभाषी ● कुल पृष्ठ संख्या 8 ● 16 से 31 जनवरी, 2019

20 हजार से अधिक लोगों ने मिलकर मनाया डॉ. उदित राज का जन्मदिवस

सी. एल. मौर्य

26 जनवरी, 2019 को सांसद, डॉ. उदित राज के लोक सभा क्षेत्र उत्तर पश्चिम दिल्ली के जापानी पार्क में उनका जन्मदिन 'जस्टिस डे' के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर लोक सभा क्षेत्र के निवासियों के साथ-साथ भारी संख्या में अनुसूचित जाति/जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ एवं डी.ओ.एम. परिसंघ के पदाधिकारियों व कार्यकर्त्ताओं ने भी समारोह स्थल पर पहुंचकर डॉ. उदित राज जी को शुभकमनाएं दीं। इस समारोह में 20 हजार से अधिक लोगों ने भाग लिया। दिल्ली के बाहर से भी परिसंघ के कार्यकर्त्ता इस समारोह में शामिल हुए।

जन्मदिन समारोह का समय दोपहर 12 से रखा गया था लेकिन प्रातः 10 बजे से ही लोगों का जमावड़ा कार्यक्रम स्थल पर होने लगा और लगभग 1 बजे डॉ. उदित राज जी के आगमन पर समारोह स्थल खचाखच भर गया।

डॉ. उदित राज जी ने इतनी भारी संख्या में आए हुए समर्थकों को धन्यवाद देते हुए कहा, ''इतनी भारी संख्या में आप लोगों की उपस्थिति ने एक बार फिर से मुझे नई ऊर्जा देता है कि मैं जीवनभर जनहित का कार्य करता रहूं। लोक सभा क्षेत्र से भी इतनी बड़ी संख्या में लोगों की उपस्थिति बताती है कि निश्चय ही जनता मुझसे संतुष्ट है। सांसद बनने के बाद से ही मैंने अपने आपको इतना सुलभ रखा कि कोई भी मुझे बड़ी आसानी से मिल सकता है और अपनी समस्या रख सकता है। यथासंभव मैंने उस समस्या के निराकरण के लिए प्रयास किया और ज्यादातर मामलों में सफलता भी मिली।

उपस्थित जनसमूह के साथ डॉ. उदित राज उनकी पत्नी सीमा राज,पुत्र अभिराज एवं पुत्री सावेरी

इस अवसर पर डॉ. उदित राज जी ने अपने हाथों से दिव्यांगजनों को मोटराज्ड ट्राइसाकिल उपलब्ध करवाए। इसके अलावा विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया। शिक्षा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य करने वाले विभिन्न स्कूलों एवं व्यक्तियों को भी सम्मानित किया गया। महिला सशक्तिकरण के लिए भी कार्यक्रम आयोजित किया गया।

समारोह स्थल पर उनके जीवन पर आधारित फिल्म 'द क्रूसेडर' भी प्रदर्शित की गयी।

लगभग डेढ़ दशक से डॉ. उदित राज जी का जन्मदिन उनके शुभचिंतकों व समर्थकों द्वारा 'जस्टिस डे' के रूप में देश के विभिन्न भागों में मनाया जाता है। शुरू में डॉ. उदित राज जी अपना जन्मदिन मनाने के पक्ष में नहीं थे लेकिन शुभचिंतकों की राय थी कि साल में कम से एक अवसर ऐसा होना चाहिए कि जब डॉ. उदित राज जी के जीवन से लोग अवगत हो सकें। जब उनके संघर्ष की कहानी साल में कम से कम एक बार समर्थकों के समक्ष आएगी तो इससे उन्हें बल मिलेगा। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए 'द क्रूसेडर' के निर्माता श्री अजय चिटनिस ने उनके जीवन पर आधारित फिल्म बनाने का फैसला किया था। इस फिल्म में उनके बचपन के संघर्ष, पढ़ाई-लिखाई, श्रीमती सीमा राज जी से मुलाकात, भारतीय राजस्व सेवा में चयन, उसके उपरांत अनुसूचित जाति/जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ का गठन, सेवा से किन परिस्थितियों में त्यागपत्र देकर राजनैतिक कैरियर की शुरुआत की, भारतीय जनता पार्टी में शामिल होकर लोक सभा पहुंचने के बाद संसदीय क्षेत्र की जनता के लिए किए गए विकास कार्यों तक दिखाया गया है।

✦✦✦

सवर्ण आरक्षणः भारत के वर्ग संघर्ष के इतिहास में एक नया अध्याय

-एच.एल.दुसाध

8-9 जनवरी, 2019, ये दो दिन स्वाधीन भारत के इतिहास के बेहद खास दिनों में जगह बना लिए। इन दो दिनों में जो कुछ हुआ, उससे देश ही नहीं दुनिया भी हतप्रभ है। 7 जनवरी को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में मोदी सरकार ने निर्णय लिया कि सरकारी नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में आर्थिक आधार पर आरक्षण दिया जायेगा। इस विधेयक को संसद के वर्तमान सत्र में ही पारित कराने के लिए उसने विपक्ष के भारी विरोध के बावजूद राज्यसभा की कार्यवाही भी एक दिन के लिए बढ़ा ली और उसने आनन-फानन में शानदार तरीके से इसे संसद के दोनों सदनों में पारित भी करा लिया। इन दो दिनों में देश-दुनिया ने संविधान के साथ बलात्कार तथा गरीबी का अभूतपूर्व पैमाना तय होते देखा। देखा आरक्षण की 49.9 प्रतिशत की सीमा टूटते। और देखा मोदी के बिछाए जाल में विपक्ष, विशेषकर सामाजिक न्यायवादियों को आत्म-समर्पण करते। यही नहीं इन दो दिनों में सोशल मीडिया पर कांशीराम का मशहूर व पुराना नारा, 'जिसकी जितनी संख्या भारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी' भी अभूतपूर्व से वायरल होते देखा गया। त्वरित गति से पास हुए इस विधेयक को संविधान विरोधी बताते हुए प्रत्याशा के मुताबिक याचिका भी दायर हो चुकी है। बहरहाल इन दो दिनों में जो कुछ हुआ उससे देश दुनिया को बिलकुल ही हतप्रभ नहीं होना चाहिए, क्योंकि बहुत नया कुछ नहीं हुआ है। ठन्डे दिमाग से अगर विवेचना की जाय तो यही नजर आएगा कि इन 48 घंटों में सिर्फ भारत के वर्ग संघर्ष के इतिहास में एक नया अध्याय मात्र जोड़ा गया है। इसे समझने के लिए महान समाज विज्ञानी कार्ल मार्क्स के नजरिये से मानव जाति के इतिहास का, जिसकी हम अनदेखी करने के अभ्यस्त रहे हैं, सिंहावलोकन करना पड़ेगा।

मार्क्स ने कहा है अब तक का विद्यमान समाजों का लिखित इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है। एक वर्ग वह है जिसके पास उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व है और दूसरा वह है, जो शारीरिक श्रम पर निर्भर है। पहला वर्ग सदैव ही दूसरे का शोषण करता रहा है। मार्क्स के अनुसार समाज के शोषक और शोषित : ये दो वर्ग सदा ही आपस में संघर्षरत रहे और इनमे कभी भी समझौता नहीं हो सकता। मार्क्स के वर्ग-संघर्ष के इतिहास की यह व्याख्या एक मानव जाति के सम्पूर्ण इतिहास की निर्भूल व अकाट्य सचाई है, जिसकी भारत में बुरी तरह अनदेखी होती रही है, जोकि हमारी ऐतिहासिक भूल रही। ऐसा इसलिए कि विश्व इतिहास में वर्ग-संघर्ष का सर्वाधिक बलिष्ठ चरित्र हिन्दू धर्म का प्राणाधार उस वर्ण-व्यवस्था में क्रियाशील रहा है, जो मूलतः शक्ति के स्रोतों अर्थात उत्पादन के साधनों के बंटवारे की व्यवस्था रही है एवं जिसके द्वारा ही भारत समाज सदियों से परिचालित होता रहा है। जी हाँ, वर्ण-व्यवस्था मूलतः संपदा-संसाधनों, मार्क्स की भाषा में कहा जाय तो उत्पादन के साधनों के बटवारे की व्यवस्था रही। चूँकि वर्ण-व्यवस्था में विविध वर्णों(सामाजिक समूहों) के पेशे/कर्म तय रहे तथा इन पेशे/कर्मों की विचलनशीलता धर्मशास्त्रों द्वारा पूरी तरह निषिद्ध रही, इसलिए वर्ण-व्यवस्था एक आरक्षण व्यवस्था का रूप ले ली, जिसे हिन्दू आरक्षण कहा जा सकता है। वर्ण-व्यवस्था के प्रवर्तकों द्वारा हिन्दू आरक्षण में शक्ति के समस्त स्रोत सुपरिकल्पित रूप से तीन अल्पजन विशेषाधिकारयुक्त तबकों के मध्य आरक्षित कर दिए गए। इस आरक्षण में बहुजनों के हिस्से में संपदा-संसाधन नहीं, मात्र तीन उच्च वर्णों की सेवा आई, वह भी पारिश्रमिक-रहित। वर्ण-व्यवस्था के इस आरक्षणवादी चरित्र के कारण दो वर्गों का निर्माण हुआः एक विशेषाधिकारयुक्त व सुविधासंपन्न अल्पजन और दूसरा वंचित बहुजन। ऐसे में दावे के साथ कहा जा सकता है कि सदियों से भारत में वर्ग संघर्ष आरक्षण में क्रियाशील रहा है। बहरहाल प्राचीन काल में शुरू हुए 'देवासुर-संग्राम' से लेकर आज तक सवर्णों की समस्त धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक और राजनीतिक गतिविधियाँ जहां हिन्दू आरक्षण से मिले वर्चस्व को अटूट रखने पर केन्द्रित रहीं, वहीं बहुजनों की ओर से जो संग्राम चलाये गए हैं, उसका प्रधान लक्ष्य शक्ति के स्रोतों (आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक और धार्मिक-सांस्कृतिक) में बहुजनों की वाजिब हिस्सेदारी रही है। वर्ग संघर्ष में प्रायः यही लक्ष्य दुनिया के दूसरे शोषित-वंचित समुदायों का भी रहा है। भारत के मध्य युग में जहां संत रैदास, कबीर, चोखामेला, तुकाराम इत्यादि संतों ने तो आधुनिक भारत में इस संघर्ष को नेतृत्व दिया फुले-शाहू जी-पेरियार-नारायणा गुरु-संत गाडगे और सर्वोपरी उस आंबेडकर ने, जिनके प्रयासों से वर्णवादी-आरक्षण टूटा और संविधान में आधुनिक आरक्षण का प्रावधान संयोजित हुआ। इसके फलस्वरूप सदियों से बंद शक्ति के स्रोत सर्वस्वहांराओं (एससी/एसटी) के लिए खुल गए। हजारों साल से भारत के विशेषाधिकारयुक्त जन्मजात सुविधाभोगी और वंचित बहुजन समाजः दो वर्गों के मध्य आरक्षण पर जो अनवरत संघर्ष जारी रहा, उसमें 7 अगस्त, 1990 को मंडल की रिपोर्ट प्रकाशित होने के बाद एक नया मोड़ आ गया। इसके बाद शुरू हुआ आरक्षण पर संघर्ष का एक नया दौर।

मंडलवादी आरक्षण ने परम्परागत सुविधाभोगी वर्ग को सरकारी नौकरियों में 27 प्रतिशत अवसरों से वंचित एवं राजनीतिक रूप से लाचार समूह में तब्दील कर दिया। मंडलवादी आरक्षण से हुई इस क्षति की भरपाई ही दरअसल मंडल उत्तरकाल में सुविधाभोगी वर्ग के संघर्ष का प्रधान लक्ष्य था। कहना न होगा 24 जुलाई ,1991 को गृहित नवउदारवादी अर्थनीति को हथियार बनाकर भारत के शासक वर्ग ने मंडल से हुई क्षति की भरपाई कर लिया। मंडलवादी आरक्षण लागू होते समय कोई कल्पना नहीं कर सकता था, पर यह अप्रिय सच्चाई है कि आज की तारीख में हिन्दू आरक्षण के सुविधाभोगी वर्ग का धन-दौलत सहित राज-सत्ता, धर्म-सत्ता, ज्ञान-सत्ता पर 90 प्रतिशत से ज्यादा कब्ज़ा हो गया है, जिसमें पीवी नरसिंह राव, अटल बिहारी वाजपेयी और डॉ. मनमोहन सिंह की विराट भूमिका रही। किन्तु इस मामले में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने पूर्ववर्तियों को मीलों पीछे छोड़ दिया है। इनके ही राजत्व में मंडल से हुई क्षति की कल्पनातीत रूप से हुई भरपाई। सबसे बड़ी बात तो यह हुई है कि जो आरक्षण आरक्षित वर्गों, विशेषकर दलितों के धनार्जन का एकमात्र स्रोत था, लगभग शेष कर दिया गया है, जिससे वे बड़ी तेजी से विशुद्ध गुलाम में तब्दील होने जा रहे हैं। आरक्षण पर संघर्ष के इतिहास में आज के लोकतांत्रिक युग में परम्परागत सुविधाभोगी वर्ग की इससे बड़ी विजय और क्या हो सकती है।

अब जहां तक सवर्ण आरक्षण का सवाल है दोनों ही प्रमुख सवर्णवादी पार्टियां-कांग्रेस और भाजपा- निर्धन सवर्णों को आरक्षण देने के लिए वर्षों से प्रयत्नशील रही हैं, किन्तु इस मामले में भी चैम्पियन बनकर उभरे मोदी ही। जहां तक इस मामले में पहलकदमी का सवाल है, सबसे पहले राजस्थान में कांग्रेस की अशोक गहलोत सरकार ने 1998 में 14 प्रतिशत ईबीसी बिल पास कर संविधान की 9 वीं अनुसूची में डालने के लिए केंद्र की वाजपेयी सरकार की मंजूरी के लिए भेजा गया था। उनके पहले आरक्षण को कागजों की शोभा बनाने के लिए नवउदारवादी अर्थनीति अपनाने वाले नरसिंह राव ने 1991 में गरीब सवर्णों के लिए 10 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की थी, जिसे 1992 में हाईकोर्ट ने ख़ारिज कर दिया था। जहां तक चैम्पियन सवर्णवादी भाजपा का सवाल है, उनकी ओर से सबसे पहले राजनाथ सिंह ने उत्तर प्रदेश में अपने मुख्यमंत्रीत्व काल में 28 जून, 2001 को सामाजिक न्याय समिति का गठन करने के बाद गरीब सवर्णों के लिए 5 प्रतिशत आरक्षण की घोषणा किया, जिसके समर्थन में कांग्रेस के साथ बसपा और सपा भी होड़ लगायी थी। तब राष्ट्रीय बहस का एक नया मुद्दा खड़ा होते देख उस पर विराम लगाने के लिए प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 29 अगस्त, 2001 को संसद में घोषणा किया था, 'चूंकि आरक्षण का आधार निर्धनता नहीं, सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ापन है, अतः निर्धन सवर्णों के लिए उठती मांग पर स्वीकार दर्ज कराने का कोई कारण नहीं है।' लेकिन ऐसा नहीं कि वाजपेयी ने तब सवर्ण आरक्षण की मांग को स्व-विवेक से प्रेरित होकर ख़ारिज किया था, नहीं, ऐसा उन्होंने सहयोगी दलों के दबाव में किया था। अतः इतिहास बताता है कि संघ का राजनीतिक संगठन नयी सदी की शुरुआत से ही गरीब सवर्णों को आरक्षण देने के लिए लालायित रहा है। बाद में राजनाथ सिंह द्वारा शुरू की गयी मुहिम को आगे बढ़ाते हुए सितम्बर 2015 में राजस्थान की भाजपा सरकार ने अनारक्षित वर्ग के आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों के लिए 14 प्रतिशत आरक्षण का वादा किया था, जिसे 2016 में राजस्थान हाईकोर्ट ने रद्द कर दिया। हरियाणा में भी ऐसा ही हुआ था। इस मुहिम को आगे बढ़ाने में मोदी के गुजरात की भाजपा सरकार भी पीछे नहीं रही। उसने 1 मई, 2016 को गुजरात स्थापना दिवस पर आर्थिक आधार पर 10 प्रतिशत आरक्षण देने की घोषणा किया था, जिसमें 6 लाख तक की आय वाले गैर-अरक्षित जातियों को आरक्षण के दायरे में लाया गया था, जिस पर हाई कोर्ट में चुनौती मिलने के कारण अमल न हो सका। मुहीम की इसी कड़ी में अब मोदी सरकार ने मौका माहौल देख कर अपने कार्यकाल के शेष में कानून मंत्री रविशंकर प्रसाद के शब्दों में स्लॉग ओवर में छक्का जड़ दिया है, जिस पर बुझे मन से विपक्ष, खासकर सामाजिक न्यायवादी दल ताली बजाने के सिवाय कुछ न कर सके। बहरहाल नयी सदी से ही भाजपा में गरीब सवर्णों को आरक्षण देने की जो तीव्र ललक रही, उसे देखते हुए उन राजनीतिक विश्लेषकों पर तरस ही खाया जा सकता है, जो मोदी के छक्के को तीन राज्यों में हुई पराजय और यूपी में माया-अखिलेश के गठबंधन से जोड़कर देख रहे हैं। अटल के मजबूर सरकार के दौर को पार कर मोदी की मजबूत सत्ता के दौर में पहुंची भाजपा के लिए अपने वर्गीय हित में इस किस्म का काम अंजाम देना, उसकी प्रतिबद्धता का अंश था, जो उसने कर दिखाया है।

बहरहाल भारत के वर्ग संघर्ष के इतिहास में 8-9 तक जो नया अध्याय जुड़ा, उसमें सामाजिक न्यायवादी दल इसलिए हारे हुए नजर आये क्योंकि उनमें अपने वर्गीय हित के प्रति भाजपा जैसी प्रतिबद्धता नहीं रही, वे नयी सदी की शुरुआत से ही सवर्णपरस्ती में होड़ लगाते रहे। पर, राहत की बात यह रही कि बुरी तरह हारने के बावजूद सबने पुरजोर तरीके से जिसकी जितनी संख्या... की मांग उठाया। इससे भी बड़ी बात यह हुई कि अपने नेताओं की भूमिका से निराश बहुजनों ने सोशल मीडिया पर संख्यानुपात में सर्वव्यापी आरक्षण का सैलाब बहा दिया। यदि हारा हुआ बहुजन नेतृत्व अतीत से सबक लेते हुए सर्वव्यापी आरक्षण पर अपनी राजनीति को केन्द्रित कर सका तो आने वाले दिनों में जन्मजात वंचितों के लिहाज से भारत के वर्ग संघर्ष में सुनहले अध्याय भी जुड़ सकते है।

पाठकों से अपील

'वॉयस ऑफ बुद्धा' के सभी पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अभी तक वार्षिक शुल्क/शुल्क जमा नहीं किया है, वे शीघ्र ही बैंक ड्रॉफ्ट द्वारा 'जस्टिस पब्लिकेशंस' के नाम से टी-22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001 को भेजें। शुल्क 'जस्टिस पब्लिकेशंस' के खाता संख्या 0636000102165381 जो पंजाब नेशनल बैंक की जनपथ ब्रांच में है, सीधे जमा किया जा सकता है। जमा कराने के तुरंत बाद इसकी सूचना ईमेल, दूरभाष या पत्र द्वारा दें। कृपया 'वॉयस ऑफ बुद्धा' के नाम ड्राफ्ट या पैसा न भेजें और मनीआर्डर द्वारा भी शुल्क न भेजें। जिन लोगों के पास 'वॉयस ऑफ बुद्धा' नहीं पहुंच रहा है, वे सदस्यता संख्या सहित लिखें और संबंधित डाकघर से भी सम्पर्क करें। आर्थिक स्थिति दयनीय है, अतः इस आंदोलन को सहयोग देने के लिए खुलकर दान या चंदा दें।

सहयोग राशिः

पांच वर्ष :	600 रुपए
एक वर्ष :	150 रुपए

भारत में किस हाल में जी रहा है दलित समाज?

आनंद तेलतुंबडे
राजनीतिक विश्लेषक

दलित, जिन्हें पहले अछूत कहा जाता था, वो भारत की कुल आबादी का 16.6 फ़ीसद हैं। इन्हें अब सरकारी आंकड़ों में अनुसूचित जातियों के नाम से जाना जाता है।

1850 से 1936 तक ब्रिटिश साम्राज्यवादी सरकार इन्हें दबे-कुचले वर्ग के नाम से बुलाती थी। अगर हम दो करोड़ दलित ईसाईयों और 10 करोड़ दलित मुसलमानों को भी जोड़ लें, तो भारत में दलितों की कुल आबादी करीब 32 करोड़ बैठती है। ये भारत की कुल आबादी का एक चौथाई है। आधुनिक पूंजीवाद और साम्राज्यवादी शासन ने भारत की जातीय व्यवस्था पर तगड़े हमले किए, फिर भी, दलितों को इस व्यवस्था की बुनियादी ईंट की तरह हमेशा बचाकर, हिफ़ाज़त से रखा गया, ताकि जाति व्यवस्था ज़िंदा रहे। फलती-फूलती रहे। दलितों का इस्तेमाल करके ही भारत के संविधान में भी जाति व्यवस्था को ज़िंदा रखा गया।

बंटे हुए हिंदू समाज का आइना हैं दलित

सभी दलितों के साथ भेदभाव होता है, उन्हें उनके हक से वंचित रखा जाता है। ये बात आम तौर पर दलितों के बारे में कही जाती रही है। लेकिन करीब से नजर डालें, तो दलित, ऊंच-नीच के दर्जे में बंटे हिंदू समाज का ही आईना हैं।

1931-32 में गोलमेज सम्मेलन के बाद जब ब्रिटिश शासकों ने समाज को सांप्रदायिक तौर पर बांटा तो, उन्होंने उस वक्त की अछूत जातियों के लिए अलग से एक अनुसूची बनाई, जिसमें इन जातियों का नाम डाला गया। इन्हें प्रशासनिक सुविधा के लिए अनुसूचित जातियां कहा गया। आज़ादी के बाद के भारतीय संविधान में भी इस औपनिवेशिक व्यवस्था को बनाए रखा गया। इसके लिए संवैधानिक (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 जारी किया गया, जिसमें भारत के 29 राज्यों की 1108 जातियों के नाम शामिल किये गए थे। हालांकि ये तादाद अपने आप में काफी ज्यादा है। फिर भी अनुसूचित जातियों की इस संख्या से दलितों की असल तादाद का अंदाज़ा नहीं होता। क्योंकि ये जातियां भी, समाज में ऊंच-नीच के दर्जे के हिसाब से तमाम उप-जातियों में बंटी हुई हैं।

दो हज़ार से चल रही है जातीय व्यवस्था

यूं तो, भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों की ज़िंदगी को संचालित करने वाली ये ज़ातीय व्यवस्था पिछले क़रीब दो हज़ार सालों से ऐसे ही चली आ रही है लेकिन, इस ज़ातीय व्यवस्था के भीतर जातियों का बंटवारा तकनीकी-आर्थिक तौर पर और सियासी उठा-पटक की वजह से बदलता रहा है।

भारत के ग्रामीण समाज में तमाम जातियां अपनी जाति के पेशे करती आई हैं। लेकिन, देश के अलग-अलग हिस्सों में कई जगह दलित ज़ातियों की आबादी इतनी ज़्यादा हो गई कि उन्हें किसी ख़ास पेशे के दायरे में बांधकर रखना मुमकिन नहीं था। सो, नतीजा ये हुआ कि इन दलितों ने अपना अस्तित्व बचाने के लिए जो भी पेशा करने का मौक़ा मिला, उसे अपना लिया।

जब भारत में मुस्लिम धर्म आया, तो ये दलित और दबे-कुचले वर्ग के लोग ही मुसलमान बने। जब यूरोपीय औपनिवेशिक का भारत आना हुआ, तो समाज के निचले तबके के यही लोग उनकी सेनाओं में भर्ती हुए। जब ईसाई मिशनरियों ने स्कूल खोले, तो इन दलितों को उन स्कूलों में दाखिला मिला और वो ईसाई बन गए। हर मौके का फायदा उठाते हुए, वो औपनिवेशिक नीति की मदद से आगे बढ़े और इस तरह से दलित आंदोलन संगठित हुआ। डॉ. भीमराव आम्बेडकर जैसे नेता इसी व्यवस्था से आगे बढ़े और उन्होंने दलितों की अगुवाई की।

दलित आंदोलन के फायदे

बीसवीं सदी की शुरुआत में दलितों की हालत, सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक तौर पर एक जैसी ही थी। गिने-चुने लोग ही थे, जो दलितों की गिरी हुई हालत से ऊपर उठ सके थे। डॉ. आम्बेडकर की अगुवाई में दलित आंदोलन ने दलितों को कई फ़ायदे मुहैया कराए। इनमें आरक्षण और कानूनी संरक्षण जैसी सुविधाएं को गिनाया जा सकता है। आज शासन व्यवस्था के हर दर्जे में कुछ सीटें दलितों के लिए आरक्षित होती हैं। इसी तरह सरकारी मदद से चलने वाले शैक्षिक संस्थानों और सरकारी नौकरियों में भी दलितों के लिए आरक्षण होता है। आज़ादी के बाद बने भारत के संविधान में दलित हितों के संरक्षण के लिए ये व्यवस्थाएं की गई हैं। हालांकि उन्हें लागू करने की प्रक्रिया आधी-अधूरी ही रही है। फिर भी इनकी वजह से दलितों के एक तबके को फ़ायदा हुआ है। अस्तित्व के लिए उनकी लड़ाई आसान हुई है। इन कदमों की वजह से आज दलितों की हर जगह नुमाइंदगी होती है। राजनीति (संसद और विधानसभाओं-स्थानीय निकायों) में ये संख्या सुनिश्चित है। लेकिन शैक्षिक संस्थानों और सरकारी नौकरियों (अफसरशाही) में भी हम दलितों की नुमाइंदगी देखते हैं।

एक सदी पुरानी हालत में दलित

हालांकि, अकादेमिक और ब्यूरोक्रेसी के विकास में उनकी तादाद घट रही है। पिछले सात दशकों में दलितों की दूसरी और तीसरी पीढ़ी, तरक्की की नई ऊंचाइयां छू रही है। ज़्यादातर मामलों में अब उन्हें आरक्षण की ज़रूरत नहीं मालूम होती। आज अमरीका और दूसरे देशों में दलित अप्रवासियों की अच्छी-ख़ासी आबादी रहती है। आज कई दलितों ने कारोबार में भी सिक्का जमाया है। तो, ऐसा लगता है कि दलितों के एक तबके ने काफी तरक्की कर ली है, लेकिन अभी भी ज़्यादातर दलित उसी हालत में हैं, जिस स्थिति में वो आज से एक सदी पहले थे। जिस तरह से आरक्षण की नीति बनाई गई है, ये उन्हीं लोगों को फ़ायदा पहुंचाती आ रही है, जो इसका लाभ लेकर आगे बढ़ चुके हैं।

नतीजा ये है कि दलितों में भी एक छोटा तबका ऐसा तैयार हो गया है, जो अमीर है। जिसे व्यवस्था का लगातार फ़ायदा हो रहा है।

ये दलितों की कुल आबादी का महज़ 10 फ़ीसद है। आम्बेडकर ने कल्पना की थी कि आरक्षण की मदद से आगे बढ़ने वाले दलित, अपनी बिरादरी के दूसरे लोगों को भी समाज के दबे-कुचले वर्ग से बाहर लाने में मदद करेंगे। मगर, हुआ ये है कि तरक्कीयाफ़्ता दलितों का ये तबका, दलितों में भी सामाजिक तौर पर ख़ुद को ऊंचे दर्जे का समझने लगा है। दलितों की ये क्रीमी लेयर बाक़ी दलित आबादी से दूर हो गई है।

गांवों में दलित आबादी का हाल

इनके दलित समुदायों से इतर अपने अलग हित हो गए हैं. इनकी तरक़्क़ी से समाज के दूसरे तबक़ों को जो शिकायत है, उसका निशाना आम तौर पर वो दलित बनते हैं, जो गांवों में रहते हैं, और, तरक़्क़ी की पायदान में नीचे ही रह गए हैं। देश में कृषि व्यवस्था के बढ़ते संकट ने ऊंचे तबके के किसानों और दलितों के रिश्तों में और तनातनी बढ़ाई है। क्योंकि दलित भूमिहीन हैं, तो उन पर इस संकट का असर नहीं होता। साथ ही शिक्षा और रोज़गार के बढ़ते मौक़ों का फ़ायदा उठाकर और लामबंदी करके दलित आज ऊंचे तबके के ग्रामीणों से बेहतर हालात में हैं। दलितों के प्रति ये नाराज़गी कुछ छोटी हिंसक घटनाओं की वजह से भयंकर जातीय संघर्ष में बदल जाते हैं। ये पूरी तरह से आज़ादी के बाद की आर्थिक सियासत का नतीजा है। जुल्मों का ये नया वर्ग तैयार हुआ है, जिसमें ऊंची जाति के हिंदू, दलितों को निशाना बनाते हैं, ताकि वो पूरे दलित समुदाय को एक सबक सिखा सकें। आज पूरे देश में दलित ऐसे हालात और जुल्म का सामना कर रहे हैं। दलित आज भी ज़्यादातर गांवों में रहते हैं। गैर दलितों के मुक़ाबले दलित आबादी का शहरीकरण आधी रफ़्तार से हो रहा है। ज़मीन के मालिक न होने के बावजूद वो आज भी भूमिहीन मज़दूर और सीमांत किसान के किरदार में ही दिखते हैं। दलितों के पास जो थोड़ी-बहुत ज़मीन है भी, तो वो छिनती जा रही है। स्कूलों में आज दलितों की संख्या दूसरी जातियों के मुक़ाबले ज़्यादा है, लेकिन ऊंचे दर्जे की पढ़ाई का रुख़ करते-करते ये तादाद घटने लगती है। आज ऊंचे दर्जे की पढ़ाई छोड़ने की दलितों की दर, गैर दलितों के मुक़ाबले दो गुनी है। कमजोर तबके से आने की वजह से वो घटिया स्कूलों में पढ़ते हैं। उनकी पढ़ाई का स्तर अच्छा नहीं होता, तो उनको रोज़गार भी घटिया दर्जे का ही मिलता है।

दलितों के ख़िलाफ़ बढ़ रहा है जुल्म

1990 के दशक से उदार आर्थिक नीतियां लागू हुईं, तो दलितों की हालत और ख़राब होने लगी। डार्विन के योग्यतम की उत्तरजीविता और समाज के ऊंचे तबके के प्रति एक ख़ास लगाव की वजह से नए उदारीकरण ने दलितों को और भी नुक़सान पहुंचाया है।

इसकी वजह से आरक्षित नौकरियों और रोज़गार के दूसरे मौक़े कम हुए हैं। 1997 से 2007 के बीच के एक दशक में 197 लाख सरकारी नौकरियों में 18.7 लाख की कमी आई है। ये कुल सरकारी रोज़गार का 9.5 फ़ीसद है। इसी अनुपात में दलितों के लिए आरक्षित नौकरियां भी घटी हैं। ग्रामीण इलाक़ों में दलितों और गैर दलितों के बीच सत्ता का असंतुलन, दलितों पर हो रहे जुल्मों की तादाद बढ़ा रहा है। आज ऐसी घटनाओ की संख्या 50 हज़ार को छू रही है।

हिंदुत्व के उभार का दलितों पर प्रभाव

उदार आर्थिक नीतियों की वजह से हिंदुत्व के उभार और फिर इसके सत्ता पर क़ाबिज़ होने की वजह से दलितों के ख़िलाफ़ जुल्म बढ़ रहा है। 2013 से 2017 के बीच ऐसी घटनाओं में 33 फ़ीसद की बढ़ोतरी देखी गई है। रोहित वेमुला, उना, भीम आर्मी और भीमा कोरेगांव की घटनाओं से ये बात एकदम साफ़ है।

दलितों के मौजूदा हालात से एकदम साफ़ है कि संवैधानिक उपाय, दलितों की दशा सुधारने में उतने असरदार नहीं साबित हुए हैं, जितनी उम्मीद थी। यहां तक कि छुआछूत को असंवैधानिक करार दिए जाने के बावजूद ये आज तक क़ायम है।

चुनाव के 'फ़र्स्ट पास्ट द पोस्ट' सिस्टम की वजह से और सत्ताधारी वर्ग की साज़िशों का नतीजा ये है कि आज दलित उधार की राजनीति में ही जुटे हुए हैं। दलितों के शिक्षित वर्ग को अपने समुदाय की मुश्किलों की फ़िक्र करनी चाहिए थी, लेकिन वो भी सिर्फ़ ज़ातीय पहचान को बढ़ावा देने और उसे बनाए रखने के लिए ही फ़िक्रमंद दिखते हैं।

https://www.bbc.com/hindi/india-44227515

✦✦✦

12

फेम इंडिया

बेजोड़

इन दस बिंदुओं पर किये गये आंकलन के आधार पर उदित राज बेजोड़ श्रेणी में प्रमुख स्थान पर है

फेम इंडिया मैगज़ीन- एशिया पोस्ट के 25 श्रेष्ठ सांसद2018 सर्वे

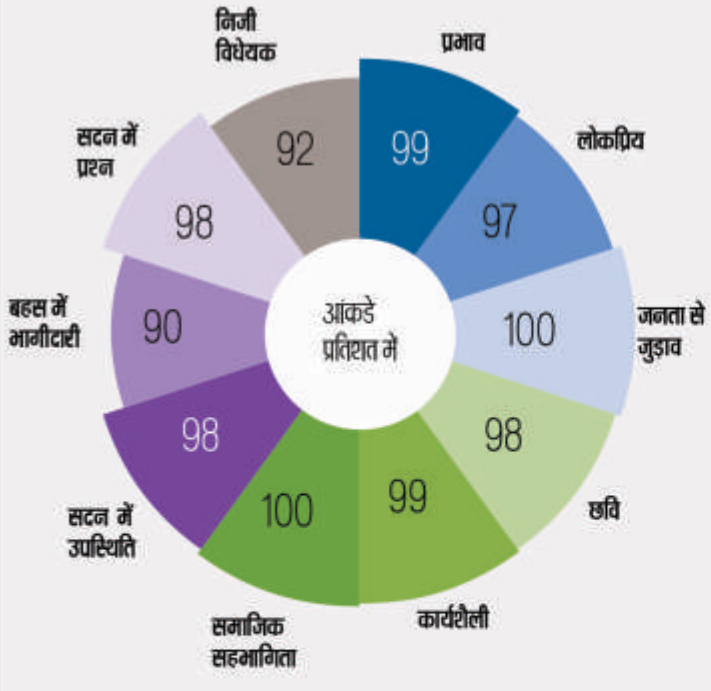

सर्वे स्रोत : विभिन्न प्रश्नों पर संसदीय क्षेत्र के लोगो की राय , विधायिका और पत्रकारिता से जुड़े लोगो से स्टेक होल्ड सर्वे और लोकसभा से उपलब्ध डाटा के विश्लेषण पर आधारित .

बेहतरीन कार्यक्षमता ने बनाया बेजोड़ सांसद

डा. उदित राज

फेम इंडिया

बेजोड़

विशेषता -

- परिसंघ द्वारा देशभर के ऑफिसर्स और कर्मचारी को एकजुट किया
- फेम इंडिया श्रेष्ठ सांसद 2017 से सम्मानित
- क्षेत्र का बेजोड़ विकास करने को प्रतिबद्धता

भारतीय जनता पार्टी के तेज-तर्रार सांसद उदित राज उन गिने-चुने राजनेताओं में से हैं जो ब्युरोक्रेसी के बड़े पद को त्याग कर जनसेवा में उतरे हैं, जनता के दुख-दर्द को करीब से समझने वाले दिल्ली के ये सांसद बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। पार्टी लाइन से अलग भी उदित राज की पहचान एक दलित राजनेता की है। उन्होंने निजी क्षेत्र में दलित आरक्षण की सिफारिश की है और एट्रोसिटीज ऐक्ट के सुधार में अहम भूमिका निभायी है। हर साल उनके परिसंघ की रैली में देश भर से लाखों लोग इकट्ठा होते हैं। हाल ही में गूगल ने उनकी साईट को मोस्ट रिस्पांसिव माना है।

उत्तर प्रदेश के रामपुर में एक दलित परिवार में 1 जनवरी 1958 को जन्मे उदित राज का नाम पहले राम राज था। उन्होंने इंटरमीडिएट तक की शिक्षा वहीं से पूरी की और उसके बाद जर्मन भाषा में एम. ए. करने के लिए जवाहर लाल नेहरु यूनिवर्सिटी में प्रवेश किया लेकिन अधूरा छोड़ दिया। इनकी रूचि हमेशा सामाजिक, राजनैतिक रही है और वे नियमित कक्षाओं में नही जाते थे, हमेशा लोगों की मदद करते रहे, नौकरशाही में जाने की इच्छा नही थी लेकिन आर्थिक तंगी ने इनको सिविल सर्विसेज की परीक्षा देने को मजबूर किया और सन 1988 में भारतीय राजस्व सेवा के लिये चुन लिए गये। इनके नेतृत्व में अनुसूचित जाति/जनजाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ का गठन अक्टूबर 1997 में हुआ। लगातार आन्दोलन से लाखों करोंड़ों समर्थक बना लिये। 4 नवम्बर 2001 को राम राज से उदित राज हुए जब लाखों दलितों के साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा ली, इसके पीछे डॉ. अम्बेडकर की प्रेरणा रही कि वो चाहते थे कि जाति व्यवस्था ख़त्म हो। हर साल उनके परिसंघ की रैली में देश भर से लाखों लोग इकट्ठा होते हैं। हाल ही में गूगल ने उनकी साईट को मोस्ट रिस्पांसिव माना है।

2003 में उन्होंने इंडियन जस्टिस पार्टी बनाई और अडिशनल कमिश्नर इनकम टैक्स के पद से इस्तीफा भी दे दिया। उनके परिसंघ की इकाइयां लगभग सभी राज्यों मे हैं और शायद ही कोई ऐसा सरकारी कार्यालय या जिला इस देश में होगा जहाँ पर इनके समर्थक न हों। वे हमेशा अधिकार और सिद्धांत को संतुलन करके चलते हैं। डॉ. उदित राज जाति प्रथा को नहीं इंसानियत को महत्व देते हैं।

उदित राज हर रोल में फिट आने वाली शख्सियत हैं और बतौर सांसद उन्होंने अपने क्षेत्र की काया पलट दी है। उन्होंने अपने क्षेत्र के विकास पर सांसद निधि व केंद्र सरकार के फंड के अलावे अपने निजी संपर्कों का इस्तेमाल कर प्राइवेट कंपनियों से भी फंडिंग खर्च करवायी है। होम्योपैथी व आयुर्वेदिक चिकित्सा के लिये एम्स के समकक्ष अस्पताल उन्होंने अपने क्षेत्र में खुलवाया है। उनके क्षेत्र में जितने फ्लाईओवर व फुटओवर ब्रिज पिछले चार वर्षों में बने हैं उतने स्वतंत्रता प्राप्ति के 70 वर्षों में भी नहीं बने।

उदित राज ने व्यापार और अर्थजगत के विकास में भी अहम भूमिका निभायी है। देश-विदेश के कई प्रमुख औद्योगिक घरानों को सम्मिलित कर उन्होंने फिक्की और ऐसोचैम जैसी एक संस्था काउंसिल फॉर प्रमोशन ऑफ ट्रेड एंड इंडस्ट्री यानी सीपीटीआई बनाने की पहल की है जो धीरे-धीरे खासा लोकप्रिय हो रहा है। दक्षिण कोरिया के चुंगच्योंगबू प्रोविंस के गवर्नर ने उन्हें हेल्थ एंड मेडिसिन के लिये ब्रांड ऐम्बेसडर भी बनाया है।

वे सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विषयों पर कई किताबें लिख चुके हैं। इसके अलावा वे पाक्षिक पत्रिका वॉइस ऑफ़ बुद्धा का संपादन भी कर चुके है और इनके सैकड़ों लेख बड़े बड़े अख़बारों में छप चुके है।

13 प्वाइंट रोस्टर खत्म कर देगा यूनिवर्सिटी से SC-ST&OBC आरक्षण?

अभय कुमार सिंह

पिछले कुछ दिनों से आपको सोशल मीडिया और तमाम दूसरे प्लेटफॉर्म पर '13 प्वाइंट रोस्टर' शब्द सुनाई दे रहा होगा। जाहिर है कि साथ ही में SC-ST&OBC शिक्षकों के विरोध प्रदर्शन के बारे में भी आप सुन रहे होंगे या पढ़ रहे होंगे। ऐसे में आपके जेहन में कुछ ऐसे सवाल होंगेः

- 13 प्वाइंट रोस्टर है क्या ? इस रोस्टर पर बवाल क्यों मच रहा है ?
- सरकार की इस नए रोस्टर में क्या भूमिका है ?
- यूनिवर्सिटी और कॉलेजों में इस रोस्टर के लागू हो जाने से SC-ST&OBC आरक्षण पर क्या असर होगा ?

दरअसल, 13 प्वाइंट रोस्टर सिस्टम यूनिवर्सिटी में आरक्षण लागू करने का नया तरीका है। इस रोस्टर सिस्टम को एससी–एसटी एवं ओबीसी आरक्षण सिस्टम के साथ 'खिलवाड़' बताया जा रहा है। अभी बवाल इसलिए मचा हुआ है, क्योंकि 200 प्वाइंट रोस्टर सिस्टम पर यूजीसी और मानव संसाधन मंत्रालय ने इलाहाबाद हाईकोर्ट के फैसले के खिलाफ याचिका दायर की थी, जिसे सुप्रीम कोर्ट ने 22 जनवरी, 2019 को खारिज कर दिया।

इसी के साथ ही ये तय हो गया कि यूनिवर्सिटी में खाली पदों को 13 प्वाइंट रोस्टर सिस्टम के जरिए ही भरा जाएगा।

इससे पहले साल 2017 में इलाहाबाद हाईकोर्ट ने अपने फैसले में कहा था कि यूनिवर्सिटी में टीचरों का रिक्रूटमेंट डिपार्टमेंट / सब्जेक्ट के हिसाब से होगा न कि यूनिवर्सिटी के हिसाब से।

बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी के बीएचयू के प्रोफेसर एमपी अहिरवार इस पूरे मामले को समझाते हुए कहते हैं कि पहले

ROSTER POINTS	DIRECT RECRUITMENT	PROMOTION
(i)	(ii)	(iii)
1.	UR	UR
2.	UR	UR
3.	UR	UR
4.	OBC	UR
5.	UR	UR
6.	UR	UR
7.	SC	SC
8.	OBC	UR
9.	UR	UR
10.	UR	UR
11.	UR	UR
12	OBC	UR
13.	UR	UR
14.	ST	ST

वैकेंसी भरते वक्त यूनिवर्सिटी को एक यूनिट माना जाता था, उसके हिसाब से आरक्षण दिया जाता था। इलाहाबाद हाईकोर्ट के फैसले के बाद वैकेंसी भरने के लिए डिपार्टमेंट / सब्जेक्ट को यूनिट माना जाने लगा। साथ ही 13 प्वाइंट रोस्टर सिस्टम लागू हुआ।

प्रोफेसर अहिरवार सिस्टम को समझाते हैं कि अगर किसी यूनिवर्सिटी के किसी डिपार्टमेंट में वेकेंसी आती है, तो :

- चौथा, आठवां और बारहवां कैंडिडेट OBC होगा, मतलब कि एक ओबीसी कैंडिडेट डिपार्टमेंट में आने के लिए कम से कम 4 वैकेंसी होनी चाहिए
- 7वां कैंडिडेट एससी कैटेगरी का होगा, मतलब कि एक एससी कैंडिडेट डिपार्टमेंट में आने के लिए कम से कम 7 वैकेंसी होनी ही चाहिए
- 14वां कैंडिडेट ST होगा, मतलब कि एक एसटी कैंडिडेट को कम से कम 14 वेकेंसी इंतजार करना ही होगा
- बाकी 1,2,3,5,6,9,10,11,13 पोजिशन अनारक्षित पद होंगे।

साफ है कि यूनिवर्सिटी में आरक्षण की पूरी प्रणाली ही खत्म कर देने के लिए ये सिस्टम बनाया गया है। एक यूनिवर्सिटी के डिपार्टमेंट को शुरू करने के लिए 2 असिस्टेंट प्रोफेसर, एक असोसिएट प्रोफेसर और एक प्रोफेसर होना चाहिए। मतलब कुल संख्या 4–5. SC-ST&OBC को आरक्षण देने के लिए इतनी वैकेंसी कहां से लाई जाएगी ? देश में शायद ही कोई ऐसी यूनिवर्सिटी हो, जहां एक डिपार्टमेंट में एक साथ 14 या उससे ज्यादा वेकेंसी निकाली जाती हो। मतलब ओबीसी–एससी का हक मारा जा रहा है, एसटी समुदाय के रिजर्वेशन को तो बिलकुल खत्म कर देगी ये प्रक्रिया।

क्या सरकार ने इमानदारी से कोशिश नहीं की?

दिल्ली यूनिवर्सिटी के एसोसिएट प्रोफेसर रतन लाल इस नए नियम को लागू करने में सरकार की भूमिका को संदिग्ध बताते हैं। उनका कहना है कि कोर्ट में सही तरीके से दलीलें नहीं रखी गईं, 13 प्वाइंट रोस्टर सिस्टम को समझाया नहीं गया कि किस तरह से संवैधानिक अधिकारों का हनन हो सकता है। वो इसे 'आरक्षण व्यवस्था की हत्या' बताते हैं।

प्रोफेसर अहिरवार, प्रोफेसर रतन लाल की बात से इत्तेफाक रखते हैं। उनका कहना है कि साल 2017 में नए नियम के खिलाफ आवाज उठी, तो ये मुद्दा पार्लियामेंट्री स्टैंडिंग कमेटी और ओबीसी वेलफेयर कमेटी तक पहुंचा। संसद में भी सवाल उठे, ऐसे में सरकार ने देशभर से आंकड़े मंगा लिए।

इन आंकड़ों से ये साफ हो गया था कि विभागवार आरक्षण के माध्यम से एससी–एसटी–ओबीसी का प्रतिनिधित्व बिलकुल खत्म हो जाएगा। ये जानने के बाद भी सरकार ने सुनियोजित तरीके से सुप्रीम कोर्ट में आंकड़े नहीं रखे और ये आरक्षण को खत्म करने वाला फैसला आ गया।

अब एक और आंकड़ा देखकर आपको हैरानी हो सकती है। यूं तो देश के 40 केंद्रीय विश्वविद्यालयों में आरक्षण लागू होता है। लेकिन इंडियन एक्सप्रेस की एक रिपोर्ट के मुताबिक, देश की इन यूनिवर्सिटी में 95.2 प्रतिशत् प्रोफेसर, 92.9 प्रतिशत असोसिएट प्रोफेसर, 66.27 प्रतिशत असिस्टेंट प्रोफेसर जनरल कैटेगरी से आते हैं। इनमें SC- ST और OBC के वो उम्मीदवार भी हैं, जिन्हें आरक्षण का फायदा नहीं मिला है।

साफ है कि यूनिवर्सिटी में अब तक भी आरक्षण को सही तरीके से लागू नहीं किया जा सका है। अब डर है कि SC-ST और OBC के आरक्षण के हक को नए नियम–कानून से और भी मारा जा सकता है।

https://hindi.thequint.com/news/india/13-point-roster-reservation-in-university-impact-on-sc-st-obc-community

Published in Frontline Magazine

Time to end this discriminatory practice'

INTERVIEW: UDIT RAJ by
VENKITESH RAMAKRISHNAN and
ANANDO BHAKTO

Print edition : February 01, 2019

On the morning of January 2, 2019, as the news broke that two young women had entered the Sabarimala shrine, Udit Raj, the Bharatiya Janata Party's (BJP) member of the Lok Sabha from North-West Delhi constituency and national chairman of the All India Confederation of S.C./S.T. Organisations, welcomed the development, saying that it was a shot in the arm for gender parity and women's empowerment. Excerpts from an interview.

You have welcomed the entry of women into Sabarimala temple even as your party, the BJP, is opposed to it, with Prime Minister Narendra Modi terming it a matter of "tradition" in a recent interview. Could you elaborate on your position?

I see the issue from the perspective of regressive conventions and reforms. Our country has never seen major reform movements, save those steered by Dr. B.R. Ambedkar in Maharashtra, [E.V. Ramasamy] Periyar in Tamil Nadu and Sree Narayana Guru in Kerala. Reforms are necessary not only to empower Dalits and other backward classes and integrate society, but also to accelerate the growth engine of the country. States that have had a history of reform movements, such as Tamil Nadu, Kerala, Maharashtra and Andhra Pradesh, outshine others in social welfare, education, health and growth indices.

In Kerala, the state uprooted caste-based discrimination and introduced reservation as early as 1935. In Tamil Nadu, the Justice Party introduced reservation in 1941, while in Mysore it was introduced even earlier, by the early 1920s. In Maharashtra, reform movements were pioneered by Shahuji Maharaj and later by Jyotirao Phule and Ambedkar, and their efforts fostered overall development. In Karnataka, the Sir Leslie Miller Committee, set up under the colonial regime, initiated welfare measures. It is by virtue of reforms that south India is ahead of the northern States in terms of employment generation, investment, and creation of workforce in the Information Technology sector, and giving the country eminent scientists. South India also fares better than the northern States when it comes to religious tolerance and showcasing the liberal face of religion.

In the context of the Sabarimala row, what do you think of the so-called "Save Ayyappa" movement, essentially led by a clutch of upper-caste organisations.

Allowing the entry of women into the Sabarimala temple is nothing but the implementation of Ambedkarism; it also vindicates the Constitution and the judgment of the Supreme Court. When you obstruct the entry of women, it has a cascading effect that eventually hurts Dalits. The same logic is applied to discriminate against people belonging to the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes. In the name of upholding traditions and customs, Dalits are treated worse than animals. Breaking a regressive tradition would yield indirect benefits to the S.Cs and the S.Ts. In the past, evil practices such as sati, child marriage, female infanticide, untouchability and not letting women belonging to the lower castes cover their breasts were all discarded. It is time we discarded this discriminatory practice of not letting women enter the Sabarimala temple.

Do you see the current impasse over the Sabarimala temple as a reflection of the limitation of the Indian engagement with modernity? Do you see any parallels with the temple entry proclamation in Kerala, which got implemented properly more than a decade after it was pronounced by the Travancore king in the mid 1930s?

Things are moving faster now than they did in previous decades. The advancement in technology and the emergence of social media have contributed to people's awareness. There is also widespread consciousness [of issues] among Dalits and the lower castes, which was not hitherto seen. In the age of the Internet, it is not possible to perpetuate orthodoxy.

But it seems that the BJP and the Congress, the two mainstream parties, do not seem to understand this. They are the people who are actively promoting and facilitating a section of upper castes agitating in Kerala.

I don't want to indulge in a political debate. I want to focus on the social aspect of the Sabarimala row. The views that I have enunciated are also the views of the lower castes and Dalits. Collectively, these are the voices for gender parity and social justice. These voices need to be heard and shared to usher in an era of social equality. Indulging in a political debate will dilute that purpose.

There are similar movements that have underscored the same concept, such as the movement for women's entry into the Shani Shingnapur temple. A group of Muslim women from Kerala have also appealed to the Supreme Court seeking the right to offer open prayers in mosques. However, in spite of all this progress, a counter-movement to obstinately stick to tradition with reactionary and revivalist overtones has also come up.

There is polarisation in our society and we have people who espouse social change and those who are opposed to it. But, I would say that the fundamentalist elements in the upper castes are getting isolated by the day. Service to the nation involves upholding equality and liberal values and focussing on research. Sloganeering will not lead to progress. How can a slogan such as "Bharat mata ki jai" herald progress if the sons and daughters of the country continue to be discriminated against?

You have been consistently focussing on the issue of sloganeering in your political and organisational interventions. You have said that welfare measures for Dalits have become gestures of tokenism. Could you explain?

The privatisation of the economy, initiated by the P.V. Narasimha Rao-led government in 1991, has led to the gradual shrinking of the public sector. All important service sectors are owned by corporate houses which, unlike in the West, do not have a human face. The imitation of laissez faire economy has led to the further marginalisation of Dalits and S.Cs/S.Ts, who are systematically denied a share in the decision-making or managerial berths in the private sector. Our private players, unlike their counterparts in Europe or the United States, are not committed to fostering research and development or taking up corporate social responsibilities. Entrepreneurs in the West make it a point to give back to society in one form or the other, even if only through corporate social responsibility donations running into billions of dollars. Do you have such examples in our country? Our corporate houses have only displayed a hedonistic, animalistic instinct to accumulate and hoard wealth.

But successive governments have claimed that in terms of S.C/S.Ts' empowerment, there has been substantial progress?

There are three ways to empowerment—participation in government, reservation and welfare measures. As far as the lower castes are concerned, welfare measures have not happened. It is not reassuring when it comes to reservation in government and private-sector jobs, in education and in politics. As many as 2,000 Rajiv Gandhi fellowships, meant to facilitate the pursuit of higher education of SC/STs, have been discontinued—now only those who qualify for JRF [junior research fellowship] and NET [national entrance test] will be entitled to it. More than 70 per cent of the education sector is privatised, with the consequent exclusion of the backward classes.

Law Minister Ravi Shankar Prasad recently underlined the need to make the judiciary more representative. Would you like to comment on the current composition of the judiciary?

The judiciary is completely an opaque house and there is no merit in the appointment of judges. Judges appoint judges, and this arrangement allows caste-based discrimination. Although our parliamentary system is modelled after the British system, we did not emulate their mechanism of having a selection commission to appoint judges. In India, they struck down the proposed National Judicial Appointment Commission. Our political class allowed the judiciary to usurp the Constitution. The Attorney General, K.K. Venugopal, was right when he said that our Constitution was no longer the sovereign and that the judiciary was sovereign. How can we expect justice for the people?

We were talking about the need for reforms, but reforms are the outcome of debate and dissent. In the current political climate, do you think there is space for debate and dissent?

Our society is a very rigid society.

What about the ruling elite?

What I say is more comprehensive. In India, people believe in anything. A live snake is killed and a dead snake is worshipped. If one person stands with folded hands in front of a tree, you would soon see several others emulating him. This is an environment that seeks to suppress or limit change.

Talking about beliefs, there are people who worship the cow also, and of late, even people who head or are part of the State and Central governments seem to be saying that cows are more important than human beings. What is your view on the ongoing spate of mob lynchings?

Of course, those who lynch people value cows more than human beings.

The lynchers often find solidarity in the political class.

That is very unfortunate.

Currently there seems to be a clash between people who want reforms and those who side with convention. The American political scientist Samuel Huntington said that the clash of civilisations is going to be the defining ideology in the post-Cold War era. Do you think that what we are seeing corroborates such a world view?

Given the current situation in the country, particularly in the light of the killings involving cow vigilantism, I will not call this civilisation. This is un-civilisation. Civilisation is a higher form of humanity and it entails respecting the sentiment and ideas of others, tolerating, and believing in scientific temperament. Otherwise, what is the difference between the primitive and the modern eras?

https://frontline.thehindu.com/cover-story/article26002083.ece

---

✦✦✦

VOICE OF BUDDHA

Publisher : Dr. UDIT RAJ (RAM RAJ), Chairman - Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42

● Year : 22 ● Issue 3 ● Fortnightly ● Bi-lingual ● Total Pages 8 ● 16 to 31 January, 2019

Anganwadi centre locked up for Dalit cook

An Anganwadi centre in the remote seaside village of Debendranarayanpur is locked up for the last three months, depriving as many as 60 children of mid-day meal and early education.

By Ashis SenapatiExpress News Service

KENDRAPARA: An Anganwadi centre in the remote seaside village of Debendranarayanpur is locked up for the last three months, depriving as many as 60 children of mid-day meal and early education.

Reason: A Dalit woman has been appointed as its cook-cum-helper.

Some upper-caste villagers had taken exception to the appointment of Sanjukta Biswas, a Dalit, as cook-cum-helper of the Anganwadi centre. Claiming that their children will not take the food prepared by Sanjukta, they demanded her replacement and have locked up the centre since November 2 last year.

"They have stopped me from opening the centre. I intimated the matter to the Chief Development Project Officer (CDPO) of Rajnagar block. She assured necessary action but the issue is yet to be resolved," said Anganwadi worker and in-charge of the centre Anjalirani Mandal.

Speaking to Express, Biswas said, "I was posted by the authorities as a helper in the centre. but some upper caste villagers warned me not to cook food for their children. When I refused to obey their diktat, they locked up the centre."

Meanwhile, a team of Dalit leaders visited the village on Monday. They have blamed the district administration for failing to take action against the persons who have illegally locked up the centre.

"The Supreme Court in an order in 2004 directed that cooks belonging to SC and ST should be given priority in the midday meal preparation in the schools. Stern action should be taken against the persons who objected to the appointment of a Dalit woman as a cook," said Nagen Jena, a Dalit leader and district president of Dalit Samaj.

The Rajnagar CDPO Puspalata Das said she had tried to persuade the villagers to let the centre function but they were unrelenting. "I have informed the district administration authorities in this regard," she said.

With the issue threatening to blow up, the administration has finally been stirred into action. Kendrapara Sub-Collector Sanjay Mishra said, "Rajnagar Tehsildar has been asked to submit a detailed report. After getting the report, appropriate action will be taken against the persons who illegally locked the Anganwadi centre."

http://www.newindianexpress.com/states/odisha/2019/jan/30/anganwadi-centre-locked-up-for-dalit-cook-1931918.html

✦✦✦

Appeal to the Readers

You will be happy to know that the **Voice of Buddha** will now be published both in Hindi and English so that readers who cannot read in Hindi can make use of the English edition. I appeal to the readers to send their contribution through Bank draft in favour of **'Justice Publications'** at T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001. The contribution amount can also be transferred in 'Justice Publications' Punjab National Bank account no. 0636000102165381 branch Janpath, New Delhi, under intimation to us by email or telephone or by letter. Sometimes, it might happen that you don't receive the Voice of Buddha. In that case kindly write to us and also check up with the post office. As we are facing financial crisis to run it, you all are requested to send the contribution regularly.

Contribution:

Five years : Rs. 600/-
One year : Rs. 150/-

SC/ST/OBC WOMEN/ ORGARNISES RIGHTS MEET

Hiranagar 29.01.2019: Today, Women wing of All India Confederation of SC/ST/OBC Organisations organized Reservation Rights Meet at Hiranagar. Miss Rajni Bala, State Coordinator Confederation organised this meet in which females from Samba, Ghgwal, Koota, Chhani, Hamirpur, Madeen, Garage Satoora, Chhan Rotian, Bhagacha Chak, Gafyiale and Hiranagar participated.

Shri R K Kalsotra, State President of Confederation was the Chief Guest at the Meet who was accompanied with Zakir Hussain, Coordinator Confederation & President YAC, Dinesh Bharti Coordinator NSOSYF, Tara Chand Bhagat & Banarsi Dass.

Ms Rajni said that their Constitutional Rights are decreasing day by day and only The Confederation is struggling and agitating for saving these rights & women of the society should not keep away from the movement. Therefore, this Save Rights Meet is organized and in future also we will support the mission of Save Rights Movement.

Mr. Kalsotra while addressing the women appreciated the role of Rajni and appealed to other women of the society to follow the steps of Rajni and raise awareness among the masses about their rights. He said a huge backlog in appointment is pending with the state and few days earlier he wrote to the Hon'ble Governor for clearance of this backlog through a Special recruitment drive. In case no step is taken by the administration they will launch a state wide protest and even do gheraao of the Civil Secretariat. He appealed to participants to raise the awareness further.

Mr Zakir who had come from Kargil, said similar Movement is going on in Kargil and they are all supporting the Confederation.

Dinesh Bharti said no timely scholarship is being provided to poor SC, ST & OBC students for which NSOSYF (National SC ST OBC Students & Youths Front) will participate in the geraao, whenever Confederations call for.

Other who spokesperson in the meet were Arti Devi Panch, Rani Devi, Anuradha, Sunita Devi, Sudesh Kumari & Sunita Rani. They assured to organise meetings further at their end to mobilize the women of the society.

✦✦✦

Publisher, Printer and Editor - Dr. UDIT RAJ (FORMERLY KNOWN AS RAM RAJ), on behalf of Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42, Telefax:23354843, Printed at Sanjay Printing Works, WZ-4A, Basai Road, New Delhi.
Website : www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com Computer typesetting by C. L. Maurya